इकाई 5 राजनीतिक आर्थिक दृष्टिकोण

संरचना

5.0 उद्देश्य

5.1 परिचय

5.2 आधुनिकीकरण के रूप में विकास

5.3 अल्पविकास और निर्भरता के रूप में विकास

5.4 विश्व–प्रणाली का विश्लेषण

5.5 उत्पादन दृष्टिकोण के प्रकार की अभिव्यक्ति

5.6 वर्ग विश्लेषण और राजनीतिक सत्ताएं

5.7 राज्य केंद्रित दृष्टिकोण

5.8 वैश्वीकरण और नवउदारवादी दृष्टिकोण

5.9 साराशं

5.10 प्रमुख शब्द

5.11 संदर्भ

5.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए राजनीतिक अर्थव्यवस्था का दृष्टिकोण इस बात की पुष्टि करता है कि राजनीति और अर्थशास्त्र के बीच एक संबंध मौजूद है तथा यह रिश्ता काम करता हैं एवं स्वयं को कई तरीकों से प्रकट करता हैं। यह दृष्टिकोण सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं के बीच संबंधों एवं स्पष्टीकरण के अध्ययन का सूत्र प्रदान करता हैं। इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आपको निम्न में सक्षम होना चाहिए :–

- अवधारणा के रूप में राजनीतिक अर्थव्यवस्था की विभिन्न विशेषताओं का वर्णन करें,
- समझाएं कि तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए अवधारणा कैसे प्रासंगिक हो गई हैं, तथा
- राजनीतिक अर्थव्यवस्था दृष्टिकोण के विकास का पता लगाने और
- राजनीतिक अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न सैद्धांतिक आयामों की पहचान करें; जो विगत कुछ वर्षो में देशों और सामाजिक एवं राजनीतिक घटनाओं के मध्य संबंधों के अध्ययन का आधार बना।

5.1 परिचय

राजनीतिक अर्थव्यवस्था, सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं को समझने के एक विशिष्ट तरीके को संदर्भित करती हैं; जिसके तहत अर्थव्यवस्था तथा राजनीति को अलग–अलग प्रक्षेत्र के रूप में नहीं देखा जाता हैं। यह (अ) दोनों

के बीच संबंध और (ब) धारणा जो इस संबंध को बहुविध तरीके से सामने लाती है। इन धारणाओं में महत्वपूर्ण व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्क ढ़ाचे का गठन किया गया हैं, जिसके अन्तर्गत सामाजिक और राजनीतिक घटनाओं का अध्ययन किया जा सकता हैं। यह कहने के पश्चात्, यह इंगित करना महत्वपूर्ण है कि जब राजनीतिक अर्थव्यवस्था की अवधारणा एक संबंध की ओर संकेत करती है, तो इसका कोई एक अर्थ नहीं है जिसे अवधारणा के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता हों। अवधारणा का विशिष्ट अर्थ सैद्धांतिक, वैचारिक पंरपरा पर निर्भर करता हैं। जैसे– उदारवादी या मार्क्सवादी, जिसके अंतर्गत इसे रखा गया हैं, तथा इस स्थिति के आधार पर, विशिष्ट तरीके जिसमें अर्थशास्त्र और राजनीति को स्वयं समझा जाता हैं।

दिलचस्प है कि अर्थशास्त्र और राजनीति की अलग–अलग प्रक्षेत्र के रूप में उपस्थिति अपने आप में एक आधुनिक घटना हैं। अरस्तू के समय से लेकर मध्य युग तक, अर्थशास्त्र की अवधारणा स्व–विनियमन के भिन्न क्षेत्र के रूप में अज्ञात थी। 'अर्थव्यवस्था' शब्द का ग्रीक में 'घरेलू प्रबधंन की कला' का प्रतीक है। जैसा कि ग्रीस में राजनीतिक विकास ने अनुक्रम का पालन किया :– घरेलू–गांव–शहर–राज्य। घर के प्रबंधन का अध्ययन 'राजनीति' के अध्ययन के तहत हुआ, एवं अरस्तू ने अपनी राजनीति की पहली पुस्तक में आर्थिक प्रश्नों पर विचार किया। शास्त्रीय राजनीतिक अर्थशास्त्री के बीच, एडम स्मिथ ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था को 'राजनेता या विधायक के विज्ञान की एक शाखा' माना। जहां तक मार्क्सवादी स्थिति की बात हैं, मार्क्स (1818–1883) ने स्वयं, आमतौर पर 'राजनीतिक अर्थव्यवस्था' के बारे में नहीं कहा था, बल्कि 'राजनीतिक अवधारणा को आलोचानात्मकता' के रूप में प्रस्तुत किया, जहां अभिव्यक्ति का उपयोग मुख्य रूप से शास्त्रीय लेखकों के संदर्भ में किया गया था। मार्क्स ने कभी भी राजनीतिक अर्थव्यवस्था को परिभाषित नहीं किया, लेकिन एंगेल्स ने किया। राजनीतिक अर्थव्यवस्था, उत्तरार्द्ध के अनुसार 'उत्पादन और विनिमय को नियंत्रित करने वाले कानूनों के अध्ययन का तात्पर्य जीवनयापन का साधन'(एंगेल्स, एंटी–डुहरिंग)। सोवियत आर्थिक सिद्धांतकार और इतिहासकार इस्साक इलिच रूबिन ने राजनीतिक अर्थव्यवस्था की निम्नलिखित परिभाषा का सुझाव दियाः– राजनीतिक अर्थव्यवस्था मानव कार्य गतिविधि से संबंधित है, न कि इसके तकनीकी तरीकों और श्रम के उपकरणों के दृष्टिकोण से, बल्कि इसके सामाजिक स्वरूप के दृष्टिकोण से संबंधित है। यह उन उत्पादन संबंधों से संबंधित है जो उत्पादन की प्रक्रिया में लोगों के बीच स्थापित होते हैं'(1928)। इस परिभाषा में, राजनीतिक अर्थव्यवस्था कीमतों या कमी के स्रोतों का अध्ययन नहीं हैं, बल्कि यह है कि, संस्कृति का एक अध्ययन सवालों के जवाब मांगता है, जैसे कि क्यों समाज की उत्पादक शक्तियां एक विशेष सामाजिक रूप में विकसित होती हैं, क्यों मशीनीकरण की प्रक्रिया व्यापार उद्यम के संदर्भ में प्रकट होती है, तथा क्यों औद्योगीकरण पूंजीवादी विकास का रूप ले लेता है। राजनीतिक अर्थव्यवस्था, संक्षेप में, यह पूछती है कि अर्थव्यवस्था के विशिष्ट, ऐतिहासिक रूप में लोगों की कार्य गतिविधि को कैसे विनियमित किया जाता हैं। औपनिवेशीकरण के अतं के बाद के वर्षो में, राष्ट्रों और विशिष्ट राजनीतिक एवं सामाजिक घटनाओं के बीच संबंधों की समझ को विभिन्न दृष्टिकोणों अर्थात संस्थानों, राजनीतिक समाजशास्त्र और राजनीतिक अर्थव्यवस्था द्वारा सूचित किया गया था। ये मुख्य रूप से इस बात की जांच करने के लिए तैयार किए

गए थे कि सामाजिक मूल्यों को कैसे प्रेषित किया गया था और संसाधनों को संरचनाओं के किस माध्यम से वितरित किया गया था। ये सभी अंततः आधार या मानक निर्मित करेगें, जिनके साथ विभिन्न देशों और संस्कृतियों को विकास के श्रेणीबद्ध पैमाने पर वर्गीकृत किया जा सकता है, तथा विकास और परिवर्तन के प्रक्षेप पथ के रूप में देखा जा सकता है। कई सिद्धांतों को संरचना के रूप में उन्नत किया गया था जिसके भीतर इस परिवर्तन को समझा जा सकता था। इसके अतिरिक्त यह आधुनिकीकरण सिद्धांत था, जो ऐतिहासिक संदर्भ में जापानी और यूरोपीय साम्राज्यों के अंत के एवं शीत युद्ध के आरम्भ के रूप में उभरा।

5.2 आधुनिकीकरण सिद्धांतः आधुनिकीकरण के रूप में विकास

आधुनिकीकरण का सिद्धांत प्रथम विश्व के द्वारा तीसरी दुनिया के 'नए राज्यों' की सामाजिक वास्तविकता को समझाने का एक प्रयास था। यह सिद्धांत 'पारंपरिक' और 'आधुनिक' समाजों के बीच अलगाव या द्वैवतवाद पर आधारित है। 'पारंपरिक' और 'आधुनिक' समाजों के बीच अंतर को मैक्स वेबर से टैल्कॉट पार्सन्स के माध्यम से व्युत्पन्न किया गया था। एक ऐसा समाज जिसमें ज्यादातर रिश्ते 'सार्वभौमिक' के बजाय 'विशेषवादी' थे (उदाहरणार्थ– जो विशेष लोगों से संबंधों पर आधारित हों, जैसे कि परिजन न कि सामान्य मानदंड पर जो कि व्यक्तियों के सम्पूर्ण वर्ग को दर्शाता है) जिसमें जन्म ('आरोपण') न कि 'उपलब्धि' नौकरी या कार्यालय में काम करने का सामान्य आधार थी। जिसमें निष्पक्षता के बजाय भावनाओं ने सभी प्रकार के संबंधों को नियंत्रित किया ('प्रभावकारिता' और 'तटस्थता' के बीच अंतर)। और जिसमें भूमिकाओं को अलग नहीं किया गया था– उदाहरण के लिए शाही घराना भी राज्य तंत्र था ('भूमिका की व्यापकता' बनाम 'भूमिका की विशिष्टता') जो 'पारंपरिक' कहलाता था। आमतौर पर पांरपरिक समाजों की विशेषता के रूप में देखी जाने वाली अन्य विशेषताएं थी– निम्नस्तर का श्रम, कृषि पर निर्भरता, उत्पादन की कम दर, विनिमय के स्थानीय नेटवर्क की प्रबलता और प्रतिबंधित प्रशासनिक क्षमता जैसी बातें शामिल थीं। दूसरी ओर, एक 'आधुनिक' समाज, जिसमें विपरीत विशेषताओं को प्रदर्शित करने के रूप में देखा जाता है। आधुनिक समाज को उपलब्धि, सार्वभौमिकता और व्यक्तिवाद, वैश्विक सामाजिक गतिशीलता, समान अवसर, कानून का शासन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था के रूप में परिभाषित किया गया था। दो श्रेणियों के इस 'विरोध' के पश्चात्, 'आधुनिकीकरण' ने सामाजिक संगठन के पांरपरिक से आधुनिक सिद्धांतों तक के संक्रमण की प्रक्रिया को संदर्भित किया। संक्रमण की इस प्रक्रिया को न केवल वास्तविकता में एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के नए स्वतंत्र देशों में देखा जा सकता था, बल्कि यह भी दृष्टिगोचर किया गया था कि इन देशों ने इसे स्वयं प्राप्त करने के लिए लक्ष्य के रूप में निर्धारित किया था। दूसरे शब्दों में, आधुनिकीकरण सिद्धांत का उद्देश्य पांरपरिक समाज से आधुनिक समाज में संक्रमण को समझना और बढ़ावा देना था। आधुनिकीकरण सिद्धांत ने तर्क दिया कि इस परिवर्तन को आधुनिक दुनिया के साथ पांरपरिक समाजों को 'पकड़ने' की एक प्रक्रिया के रूप में माना जाना चाहिए। आधुनिकीकरण के सिद्धांत का

डब्लू. डब्लू. रोस्टो (द स्टेज ऑफ इकोनामी ग्रोथ : ए नान–कम्युनिष्ट घोषणा पत्र, 1960) के लेखन में सर्वोत्तम रूप से विस्तार से बताया गया था, जिन्होंने तर्क दिया कि सभी समाज विकास के पांच चरणों से गुजरते थे। ये चरण थे :– (1) पारंपरिक मंच, (2) टेक–ऑफ के लिए पूर्व शर्त (3) टेक–ऑफ (4) अभियान परिपक्वता और और (5) उच्च आम खपत।

तीसरी दुनिया के समाजों को पारंपरिक माना जाता था, इसलिए उन्हें दूसरे चरण की ओर विकसित करने की आवश्यकता थी, एवं इसलिए टेक–ऑफ के लिए पूर्व शर्त स्थापित की। रोस्टो ने इन पूर्व शर्तो को व्यापार के विकास, तर्कसंगत एवं वैज्ञानिक विचारों की शुरूआत और अभिजात वर्ग के उद्‌भव जो कि अपने धन का अपव्यय करने के बजाय निवेश करता हैं। इस सिद्धांत ने तर्क दिया कि इस प्रक्रिया को पश्चिमी निवेश और विचारों के प्रोत्साहन एवं प्रसार से तेज किया जा सकता हैं। इस पंरपरा के विद्ववानों ने तर्क भी दिया कि औद्योगिकीकरण व्यक्तिवाद के पश्चिमी विचारों, अवसर की समानता और साझा मूल्यों को बढ़ावा देगा, जो बदले में सामाजिक अशांति एवं वर्ग संघर्ष को कम करेगा। जैसा कि हमने पहले उल्लेख किया है, कि शीत युद्ध के संदर्भ में आधुनिकीकरण सिद्धांत विकसित हुआ और उस समय यह कई बार स्पष्ट नहीं करता है कि (क) आधुनिकीकरण सिद्धांत एक विश्लेषणात्मक या निर्देशात्मक विधि था, (ख) क्या आधुनिकीकरण हो रहा था या क्या इसे होना चाहिए था, एवं (ग) क्या आधुनिकीकरण को बढ़ावा देने वालों का उद्देश्य गरीबी से राहत दिलाना था या साम्यवाद के खिलाफ एक बड़ा कदम उठाना था ? दो कारक जुड़े हुए हैं, लेकिन रोस्टो की पुस्तक –'ए नॉन–कम्युनिस्टो मेनिफेस्टो' के उपशीर्षक से पता चलता है कि बाद को पूर्व की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण माना जा सकता हैं। निष्कर्ष में, हम कह सकते है कि आधुनिकीकरण सिद्धांत विकासवाद–संबंधी एक विकासवादी मॉडल पर आधारित था, जिससे सभी राष्ट्र–राज्य विकास के व्यापक रूप से समान चरणों से गुजरते थे। युद्ध के बाद की दुनिया के संदर्भ में, यह अनिवार्य माना जाता था कि आधुनिक पश्चिमी दुनिया के देशों को पांरपरिक तीसरी दुनिया के देशों में आधुनिकता के लिए परिवर्तन का बढ़ावा देने हेतु मद्‌द करनी चाहिए।

5.3 विकास अल्पविकास और निर्भरता के रूप में

आधुनिकीकरण के नजरिए से विस्तारित आलोचना के रूप में 1950 के दशक के अंत में निर्भरता सिद्धांत का प्रादुर्भाव हुआ। विचार को यह संप्रदाय मुख्य रूप से आंद्रे गुंडर फैंक के कार्य से संबंधित है, लेकिन पॉल बारन (द पोलिटकल इकोनामी ऑफ ग्रोथ 1957) का प्रभाव भी बहुत महत्वपूर्ण है। बारन ने तर्क दिया कि पश्चिमी यूरोप (और बाद में जापान एवं संयुक्त राज्य अमेरिका) तथा शेष दुनिया के बीच मौजूद आर्थिक संबंध संघर्ष और शोषण पर आधारित थे। पूर्व ने 'एकमुश्त लूट या लूट में भाग लिया, उनकी पैठ ने वृहत स्तर पर धन को व्यापार के रूप में कब्जा कर लिया और जबरदस्त तरीके से धन की निकासी की' (बारन 1957: पेज़ 141–2)। इसके परिणामस्वरूप बाद वाले से पूर्व वाले को धन का हस्तांतरण हुआ। 1960 के दशक में, फ्रैंक ने तीसरी दुनिया के देशों को करीब से परखा, और द्वैतवादी मान्यता(आधुनिकीकरण संप्रदाय का) की आलोचना की, जिसने 'आधुनिक' और 'पांरपरिक' राज्यों को अलग–थलग कर

दिया और तर्क दिया कि दोनों निकट से जुड़े हुए थे(लैटिन अमेरिकाः अल्पविकसित या क्रांति, 1969)। उन्होंने अपनी आलोचना को आधुनिकीकरण सिद्धांत और रूढिवादी मार्क्सवाद दोनों पर लागू किया, उनके द्वैतवाद को एक सिद्धांत द्वारा प्रतिस्थापित किया गया, जिसमें तर्क दिया गया कि दुनिया सोलहवीं शताब्दी के बाद से पूंजीवादी रही है, जिसमें विश्व प्रणाली में शामिल सभी क्षेत्र बाजार के लिए उत्पादन पर आधारित थे। प्रभुत्व और निर्भरता के संबंध, फ्रैंक का तर्क है कि वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली में एक श्रृंखला की तरह फैशन में चलत है, महानगरो के अधिशेष को विनियोजित करने के साथए उनके कस्बों के अधिशेष से अधिशेष को विस्थापित करते हुए, इसी क्रमबद्धता के साथ। फ्रैंक का केंद्रीय तर्क यह है कि 'प्रथम' दुनिया (उन्नत पूंजीवादी समाज) और 'तीसरी' दुनिया (अनुगामी) का निर्माण उसी प्रक्रिया (दुनिया भर में पूंजीवादी विस्तार) का एक परिणाम हैं। निर्भरता के दृष्टिकोण के अनुसार, समकालीन विकसित पूंजीवादी देश (महानगर) कभी भी तीसरी दुनिया (अनुगामी) के रूप में अल्पविकसित नहीं थे, बल्कि अविकसित थे।

अविकसित्ता, तीसरी दुनिया के देशों की अजीब सामाजिक–आर्थिक संरचनाओं के कारण होने के बजाय, अविकसित अनुगामी और विकसित महानगरों के बीच प्राप्त संबंधो (साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के संबंधों) का ऐतिहासिक उत्पाद हैं। संक्षेप में, विकास और अविकसित्ता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, एक ही प्रक्रिया के दो ध्रुव विश्व स्तर पर महानगरीय पूंजीवादी विकास तीसरी दुनिया में 'अविकसित्ता के विकास' का निर्माण करता हैं। फ्रैंक के अनुसार, लैटिन अमेरिका के सबसे पिछड़े क्षेत्र (जैसे–उत्तर–पूर्वी ब्राजील) ठीक उन क्षेत्रों में थे जो कभी महानगर से सबसे मजबूती से जुड़े थे। वृक्षारोपण और हयसेंडस (स्पेनिश भूमि सम्पदा) जैसी संस्थाएं, चाहे उनकी आंतरिक उपस्थिति कुछ भी हो, विजय के बाद से उत्पादन का पूंजीवादी रूप महानगर के बाजार से जुड़े हुए हैं। फ्रैंक के अनुसार, आर्थिक विकास, लैटिन अमेरिका में केवल उस समय में अनुभव किया गया था जब महानगरीय संपर्क कमजोर हो गए थे– नेपोलियन के युद्ध, 1930 के दशक की मंदी और बीसवीं शताब्दी के दो विश्व युद्ध– और यह ठीक उस समय समाप्त हुआ था जब महानगर ने इन व्यवधानों से उबरकर, तीसरी दुनिया से पुनः अपना संपर्क स्थापित किया। निर्भरता सिद्धांत वास्तव में आधुनिकीकरण सिद्धांत का एक शक्तिशाली उन्नत रूप था, लेकिन यह स्वयं की कमजोरियों से ग्रस्त था। सर्वप्रथम, इसे एक निश्चित एतिहासिक चरित्र का सामना करना पड़ा, इसकी अभिन्न निर्भरता की स्थिति के परिणामस्वरूप तीसरी दुनिया के देशों में आन्तरिक परितर्वन देखे गए। जैसा कि कॉलिन लेयस ने कहा था कि निर्भरता सिद्धांत '' साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के हाथों में अविकसित देशों के साथ क्या होता है, इस पर ध्यान केंद्रित करता है, न कि इसमें शामिल पूर्ण ऐतिहासिक प्रक्रिया में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के विरूद्ध संघर्ष के विभिन्न रूप शामिल है, जिनमें अल्पविकास की स्थितियों के कारण वृद्धि होती है''(द अन्डरडेवलपमेंट ऑफ केन्या, 1975, पेज 20)। दूसरे, निर्भरता सिद्धांत अर्थशास्त्रीय हो जाता है। सामाजिक वर्ग, राज्य और राजनीति आर्थिक बलों एवं तंत्र के व्युत्पन्न के रूप में दृष्टिगोचर होते है और अक्सर बहुत कम ध्यान आकर्षित करते हैं। वर्ग, वर्ग परियोजनाएं और वर्ग संघर्ष न तो ऐतिहासिक परिवर्तन के प्रमुख कारक के रूप में दिखाई देते है और न ही विश्लेषणात्क ध्यान के प्रमुख केंद्र के रूप में। तीसरा, आलोचको का आरोप है

कि विकास की अवधारणा निर्भरता सिद्धांत में अस्पष्ट हैं। यह देखते हुए अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि 'विकास' तीसरी दुनिया में तब होता है, जब महानगरीय अनुगामी संबंध कमजोर हो जाते है, तो क्या 'विकास' का तात्पर्य निरंकुशता है ? चूंकि 'विकास' महानगरों में पूंजीवादी विकास का एक गुण है, क्या इस मार्ग को दोहराने की तीसरी दुनिया की क्षमता के बारे में फिर से अंतिम विश्लेषण में बहस है ? अतं में, निर्भरता सिद्धांत की धारणाएं तीसरी दुनिया के विभिन्न तथाकथित 'आर्थिक चमत्कार' का स्पष्टीकरण प्रदान करने में विफल रहती है। इस प्रकार, आधुनिकीकरण के मिथकों से परे एक उन्नत स्थिति इंगित करते समय, निर्भरता सिद्धांत पूरी तरह से इसकी छाप से बच नहीं पाया। हालांकि आधुनिकीकरण सिद्धांत ने तर्क दिया कि 'प्रसार' ने विकास लाया है, निर्भरता सिद्धांत एक समान तरीके से बहस करता है जो स्थिरता लाती हैं।

5.4 वैश्विक प्रणाली का विश्लेषण

इमैनुअल वालरस्टीन ने अपने 'वैश्विक प्रणाली विश्लेषण' में वैश्विक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के विचार को और विकसित किया। वालरस्टीन ने तर्क दिया कि सोलहवीं शताब्दी के शुरूआत में यूरोप के विस्तार ने वैश्विक पूंजीवादी बाजार के अन्तर्गत शामिल तीसरी दुनिया के उन क्षेत्रों में उत्पादन के पूर्व–पूंजीवादी तरीकों के अंत का संकेत दिया। इस सिद्धांत के अनुसार, द्वैतवाद या सामंतवाद तीसरी दुनिया में मौजूद नहीं है। आधुनिक विश्व–व्यवस्था इसमें एकात्मक है कि यह उत्पादन की पूंजीवादी विधा का पर्यायवाची है, फिर भी इसमें असमानता है और इसे स्तरों में विभाजित किया गया है ये है– अन्तर्भाग(केंद्र), अर्ध–परिधि, परिधि, जो पूर्ण व्यवस्था के भीतर कार्यात्मक रूप से विशिष्ट भूमिका का निर्वहन करते है। वैश्विक प्रणाली का सिद्धांत व्यवस्था के बहुपक्षीय संबंधों पर एक नया जोर देता है (अन्तर्भाग–अन्तर्भाग और परिधि–परिधि के रूप में विश्लेषण करने में महत्वपूर्ण हो जाते है जैसे कि अन्तर्भाग–परिधि ने किया), बजाय महानगरीय प्रणाली के एकपक्षीय संबंध और निर्भरता सिद्धांत की अनुगामी विशेषता पर। वालरस्टीन का मूल तर्क था कि सोलहवीं शताब्दी में वैश्विक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का निर्माण इतिहास की एक नई समयावधि की वजह से हुआ, जो स्थिर उपभोग के बजाय विस्तारित संचय पर आधारित थी। यह तीन प्रमुख कारकों के उद्‌भव के लिए जिम्मेदार थाः– (1) विवाद के विषय में विश्व के भौगोलिक आकार का विस्तार (निगमन के माध्यम से) (2) विभिन्न उत्पादों और वैश्विक अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के लिए श्रम नियंत्रण के विभिन्न माध्यमों का विकास (विशिष्टीकरण) एवं (3)इस पूंजीवादी वैश्विक अर्थव्यवस्था के केंद्र राज्यों में अपेक्षाकृत सुदृढ़ राज्य मशीनरी का निर्माण (अधिशेष को केंद्र को स्थानांतरित करने का आश्वासन देना)।

वैश्विक अर्थव्यवस्था के गठन में, केंद्रीय क्षेत्र उन देशों के रूप में सामने आते हैं, जहां पूंजीपति मजबूत हुए और जमींदार कमजोर हुए। महत्वपूर्ण संबंध जो यह निर्धारित करता है कि किसी देश को परिधि का एक मूल या हिस्सा होना है या नहीं, यह उस राज्य की ताकत पर निर्भर करता है। वालरस्टीन के अनुसार, वे देश 'राज्य नियंत्रण वाद' की प्रक्रिया को प्राप्त कर सकते थे, अर्थात केंद्रीय प्राधिकरण में शक्ति का संकेंद्रण, जो कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के प्रमुख देश बन गए। दूसरी ओर, राज्य मशीनरी की ताकत 'उस समय की वैश्विक अर्थव्यवस्था

में देश की संरचनात्मक भूमिका निभाने' के संदर्भ में बताई गई हैं। एक सुदृढ़ राज्य देश को पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्था के अधिशेष का हिस्सा साझा करने के लिए एक इकाई के रूप में सक्षम बनाता हैं। वैश्विक पूंजीवादी व्यवस्था की स्थिरता तीन कारकों की वजह से बनी हुई हैः (1) प्रमुख ताकतों के हाथों में सैन्य ताकत का संकेद्रण (2) संपूर्ण रूप से प्रणाली के लिए एक वैचारिक प्रतिबद्धता की व्यापकता, एवं (3) बहुमत का विभाजन एक बड़े निचले तबके और छोटे स्तर में।

अर्ध–परिधि के अस्तित्व का तात्पर्य है कि ऊपरी स्तर (मूल) का सामना अन्य सभी के एकीकृत विरोध से नहीं होता है क्योंकि मध्य स्तर (अर्ध–परिधि) शोषित और शोषक दोनों हैं। अर्ध–परिधि, हालांकि परिवर्तन के लिए एक स्थान बनाती हैं। नए मूल राज्य अर्ध–परिधि से उभर सकते है, एवं यह गिरावट वाले लोगों के लिए एक गंतव्य है। यद्यपि वैश्विक प्रणाली के सिद्धांत को ओलिवर कॉक्स, समीर अमीन और जियोवन्नी अरिघी जैसे कई विचारकों द्वारा आगे बढ़ाया गया है, लेकिन इसके द्वारा 'प्रणाली अनिवार्यता' को प्राथमिक केंद्र–बिंदु बनाए जाने की व्यापक रूप से आलोचना की गई हैं। इस प्रकार, इस सिद्धांत में, सभी घटनाओं, प्रक्रियाओं, समूह–पहचान, वर्ग और राज्य परियोजनाओं को समग्र से प्रणाली के संदर्भ में समझाया गया हैं। इस तरह के एक संदर्भ बिंदु का तात्पर्य है कि उपर्युक्त सभी कर्त्ताओं को प्रणाली के अन्तर्गत इस तरह से अंतर्निहित माना जाता है कि वे अपने तात्कालिक मूर्त हितों में कार्य नहीं करते हैं, लेकिन हमेशा प्रणाली के नुस्खे या आदेश के अनुसार कार्य करते है। आलोचकों ने यह भी कहा कि यह सिद्धांत समकालीन पूंजीवादी दुनिया को अपर्याप्त रूप से समझता है, क्योंकि यह बाजार पर ध्यान केंद्रित करता हैं, उत्पादन की प्रक्रियाओं पर ध्यान में रखने में विफल रहा।

बोध प्रश्न 1

नोटः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए मॉडल उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) आधुनिकीकरण सिद्धांत की मुख्य विशेषताएं क्या है?

.....

.....

.....

.....

2) उपरोक्त विश्लेषण से, क्या आप उन पंक्तियों का विश्लेषण कर सकते है जिनके साथ वालेरस्टीन ने आधुनिकीकरण सिद्धांत की आलोचना की थी ?

.....

.....

.....

5.5 उत्पादन के तरीके का वर्गीकरण

1960 के दशक के उत्तरार्ध से तीसरी दुनिया में संक्रमण प्रक्रिया के लिए मार्क्सवादी दृष्टिकोण के एक निश्चित प्रकार को पुनः जीवित करने का प्रयास किया गया, जिसमें उत्पादन का तरीका निर्धारण की अवधारणा थी। विकास के इस संप्रदाय से संबंधित सिद्धांतकारों ने तर्क दिया कि तीसरी दुनिया के सामाजिक निर्माण उत्पादन के कई तरीकों को शामिल करते है और यह पूंजीवादी उत्पादन के पूर्व–पूंजीवादी तरीकों के साथ हावी एवं कलात्मक होता है। इन सिद्धांतकारों ने सामाजिक गठन एवं उत्पादन के तरीको के बीच अंतर किया। सामाजिक गठन आर्थिक, राजनीतिक और वैचारिक प्रथाओं या 'स्तरों' के संयोजन को संदर्भित करता है। उत्पादन का तरीका आर्थिक स्तर को संदर्भित करता है जो यह निर्धारित करता है कि सामाजिक गठन का निर्माण करने वाली 'संरचित समग्रता' में कौन से विभिन्न स्तर प्रमुख है। आर्थिक स्तर अन्य स्तरों पर सीमा निर्धारित करता है, जो उन कार्यो को करता है जो उत्पादन के (आर्थिक) तरीके को पुनः प्रस्तुत करते है। इसलिए, ये गैर–आर्थिक स्तर उत्पादन के तरीके का केवल एक सापेक्ष स्वायत्तता का प्रयोग लेते है। उत्पादन का तरीका या 'आर्थिक' स्तर इसके 'उत्पादन के संबंधों' से परिभाषित होता है, अर्थात अधिशेष के सन्निकट निर्माता और इसके सन्निकट विनियोगकर्त्ता के बीच सीधा संबंध। प्रत्येक समूह, दास–स्वामी, कृषक दास–जमींदार, मुक्त मजदूर–पूंजीवादी एक अलग उत्पादन के तरीके को परिभाषित करते है। उत्पादन के तरीके का परिपेक्ष्य अधिशेष उत्पाद के उत्पादन के प्रस्थान के बिंदु के रूप में लेता है एवं इसलिए व्यापार संबंधों के बजाय उत्पादन के तरीकों के आधार पर केंद्र और परिधि के बीच दुनिया के विभाजन की व्याख्या करने के लिए सक्षम हैं। इसलिए केंद्र दुनिया के पूंजीवादी क्षेत्रों के साथ मेल खाता है, जो मोटेतौर पर मुक्त मजदूरी पर आधारित है। दूसरी ओर, परिधि को उत्पादन के मुक्त संबंधों (अर्थात उत्पादन के गैर–पूंजीवादी तरीके) के आधार पर वैश्विक अर्थव्यवस्था में शामिल किया गया था, जिसने पूंजी के अभूतपूर्व संचय को रोक दिया था। असमान व्यापारिक संबंध अतः उत्पादन के असमान संबंधों का प्रतिबिंब थे। इन कारणों की वजह से 'उन्नत' पूंजीवादी' देश दुनिया के अन्य क्षेत्रों पर हावी होने में सक्षम थे, जहां उत्पादन के गैर–पूंजीवादी तरीके मौजूद थे। इस पक्ष से, उत्पादन के दृष्टिकोण का तरीका आधुनिकीकरण सिद्धांत के क्षेत्रीय (आधुनिक और पारंपरिक) विश्लेषण के लिए कम से कम आंशिक वापसी का गठन करता प्रतीत होता हैं। हालांकि, महत्वपूर्ण अंतर यह है कि द्वैतवादी व्याख्याओं के विपरीत, यहां जोर उत्पादन के साधनों के पारस्परिक संबंध पर हैं। यह तर्क दिया जाता है कि सोलहवीं शताब्दी में पश्चिम के पूंजीवादी विस्तार ने तीसरी दुनिया में उत्पादन के पूर्व–पूंजीवादी तौर–तरीकों का सामना किया, जो इसे परिवर्तित या तिरस्कृत नहीं कर सकता था, बल्कि जो इसे एक साथ संरक्षित या नष्ट कर रहा था।

उत्पादन के पूंजीवादी तरीके और उत्पादन के पूर्व–पूंजीवादी तरीके के मध्य संबंध, हालांकि स्थिर नहीं रहा है एवं उत्पादन के पूंजीवादी संबंध परिधि में उभरे हैं। परिधि में पूंजीवाद एक विशिष्ट प्रकार का है, जो मूल देशों में अपने रूप से गुणात्मक रूप से भिन्न हैं। परिधि में पूंजीवाद की चिह्नित विशेषता गैर–पूंजीवादी उत्पादन के साथ इसका संयोजन है– दूसरे शब्दों में, पूंजीवाद

उत्पादन के गैर–पूंजीवादी तरीकों के साथ सहअस्तित्व या जुड़ा होता है। साम्राज्यवादी (जोकि 'मूल–पूंजीवादी') पैठ द्वारा गैर–पूंजीवादी उत्पादन का पुर्नगठन किया जा सकता हैं, लेकिन यह इसके 'संरक्षण' द्वारा भी अधीनस्थ है। हालांकि उत्पादन सिद्धांत के तरीके को एक कार्यात्मक पद्धतिवादी दृष्टिकोण से कमजोर किया गया है। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह सिद्धांत पूंजीवाद के आवश्यक तर्क के रूप में सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या करता है। इसके परिणामस्वरूप वृत्तीय तर्क होता हैं। यदि उत्पादन का पूर्व–पूंजीवादी तरीका अस्तित्व मे रहता है तो यह पूंजीवाद के लिए इसकी कार्यक्षमता का प्रमाण है और यदि पूर्व–पूंजीवादी तरीका टूट जाता है, तो यह भी पूंजीवाद की कार्यात्मक आवश्यकता का प्रमाण है। इस दृष्टिकोण की आलोचना भी की गई है क्योंकि यह मानव को संरचना के अधीन करता है, और यह मानता है कि सामाजिक घटनाओं को पूंजीवाद के लिए उनकी कार्यक्षमता द्वारा समझाया जाता है, न कि स्वयं मनुष्यों के कार्यो और संघर्षो द्वारा।

5.6 वर्ग विश्लेषण और राजनीतिक शासन पद्धति

1970 के दशक की शुरूआत में, तीसरी दुनिया के देशों में हो रहे सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तनों को समझाने के लिए एक अन्य दृष्टिकोण मार्क्सवादी विद्ववानों का उभरा। इसमें प्रमुख योगदान कोलिन लेयस (अन्डरडेवल्पमेंट इन केन्या, 1975) और जेम्स पेट्रास (क्रिटीक्ल प्रस्पेक्टिव ऑन इम्पेरीलिज़म एंड शोसल क्लासेज़ इन द थर्ड वर्ल्ड, 1978) ने किया, जिन्होंने विकासशील देशों में संक्रमण की प्रक्रिया को विश्व की अनिवार्यता या उत्पादन के तरीकों की अभिव्यक्ति के रूप में नहीं समझाया, बल्कि इतिहास की संचालकता को मूलतः वर्गो के संदर्भ में बताया। यहां केंद्रीय बिंदु विकास अर्थात संवृद्धि, बनाम स्थिरता पर नहीं है। पेट्रास और लेयर्स ने इन प्रश्नों पर विचार व्यक्त किएः– विकास किसके लिए है? पेट्रास विश्व–प्रणाली विश्लेषण के 'वाह्य' संबंधों और उत्पादन विश्लेषण के तरीकों के 'आंतरिक' संबंधों में भिन्नता मानते है। उनके अनुसार, तीसरी दुनिया के समाजों की मुख्य विशेषता विधि पूर्वक वाह्य और आंतरिक वर्ग संरचना एक दूसरे को पार करने और वर्ग सहजीवियों के विभिन्न संयोजनों को सही करना और तरीके से मिलाना है। वैश्विक स्तर पर पूंजीवादी विस्तार ने तीसरी दुनिया में सहयोगात्मक स्तर के अस्तित्व का विस्तार किया है, जो न केवल वाह्य रूप से उत्पादन को उन्नत करता है बल्कि आंतरिक रूप से भी शोषण करता है। उपनिवेशों की स्वतंत्रता ने स्वदेशी राज्य के साधन और विभिन्न आंतरिक और बाहरी वर्ग गठबंधनों के आधार पर कई विकासात्मक रणनीतियों तक इन लोगों की पहुंच का मार्ग प्रशस्त किया। विकास की रणनीतियों के विभिन्न प्रतिरूपों की व्याख्या करने के लिए, पेट्रास ने जांच की (अ) उन परिस्थितियों की जिनके जहत संचय होता है, जिसमें शामिल हैः–(1) राज्य की प्रकृति (और राज्य नीति), (2) वर्ग संबंध (अधिशेष निष्कर्षण की प्रक्रिया, शोषण की तीव्रता, वर्ग संघर्ष का स्तर, कार्यबल का सकेंद्रण), तथा (ब) वर्ग संरचना पर पूंजी संचय का प्रभाव, जिसमें ये समझ शामिल हैः– (1) वर्ग गठन/रूपांतरण (छोटे मालिक से सर्वहारा या कुलक, जमींदार से व्यापारी, व्यापारी से उद्योगपति आदि), (2) आय वितरण (सकेंद्रण, पुनर्वितरण, आय का पुनर्गठन), (3) सामाजिक संबंधः श्रम बाजार संबंध (मुक्त मजदूरी, व्यापार संघ

सौदेबजी), अर्द्ध–प्रतिरोधिता (बाजार और राजनीतिक/सामाजिक नियंत्रण), प्रतिरोधिता (गुलाम, ऋण दासता)।

वृहत स्तर पर, पेट्रास का सुझाव है कि स्वतंत्रता के पश्चात् विकासशील देशों में राष्ट्रीय सत्ता पूंजी संचय के लिए तीन रणनीतियां या वर्ग गठबंधनों के प्रकार मे से चुनाव कर सकती है। सर्वप्रथम, नव–औपनिवेशिक रणनीति है जिसमें राष्ट्रीय सत्ता केंद्रीय पूंजीपति वर्ग के साथ स्वदेशी श्रम शक्ति के शोषण में सहभागी होती है। नव–औपनिवेशिक शासन के तहत धन और शक्ति विदेशी पूंजी के हाथों में केंद्रित होती है। दूसरे, राष्ट्रीय सत्ता स्वदेशी श्रम बल के शोषण और साम्राज्यवादी फर्मो को जाने वाले हिस्से की सीमा या उन्मूलन के आधार पर राष्ट्रीय विकास की रणनीति को निर्मित कर सकती है।

आय वितरण के प्रतिरूप के संदर्भ में, प्रमुख हिस्सा मध्यवर्ती स्तर (परिधि के शासी अभिजात वर्ग के रूप में) में जाता है। तीसरा, शासन स्वदेशी श्रम बल के साथ सहयोगी हो सकता है, विदेशी या यहां तक कि स्वदेशी उद्यम का राष्ट्रीयकरण कर सकता है, आय का पुनर्वितरण कर सकता है तथा आमतौर पर केंद्रीय पूंजी के खिलाफ राष्ट्रीय लोकलुभावन रणनीति बना सकता है। आय वितरण अधिक विविधतापूर्ण है, एवं नीचे की ओर प्रसारित हो रहा है। यद्यपि हम यहां विस्तृत विवरण में नहीं जा सकते है, पेट्रास के पास इन रणनीतियों के बीच संबंधों और नव–औपनिवेशिक शासन को समाप्त करने और अन्य को क्षीण करने में साम्राज्यवादी राज्य की भूमिका के बारे में बहुत कुछ है।

5.7 राज्य केंद्रीयकृत दृष्टिकोण

तुलनात्मक राजनीतिक अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में, 1960 के दशक के अंत में और सत्ता की अवधारणा को पुनर्जीवित करने के बाद 1970 के दशक के प्रारंभ में विकासवाद के विरूद्ध एक संघर्ष हुआ। राज्य के सिद्धांत में योगदान मुख्य रूप मार्क्सवादी विद्ववानों ने किया। मार्क्स, एंजेल्य और लेनिन ने राज्य की अवधारणा को समाज में मौजूद वर्ग विभाजन के साथ स्व–संबंधो पर आधारित किया। हांलाकि, यह इस संबंध की प्रकृति है, जो मार्क्सवादियों के बीच बहस का विषय बना हुआ है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रचलित एक परंपरा, सामुदायिक अध्ययनों से निकली है जो स्थिति और प्रतिष्ठा की रेखाओं के साथ शक्ति की पहचान करती है, जो जी.डब्लू डोमहॉफ (हू रूल्स अमेरिका? 1967, द पावर्स दैट बी 1979) के कार्यो से जुडी है। डोमहॉफ का मुख्य शोध यह है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में न केवल एक उच्च वर्ग (कॉरपोरेट पूंजीपति) मौजूद है, बल्कि यह भी कि यह वर्ग एक शासी वर्ग भी है। डोमहॉफ के योगदान को मार्क्सवाद के अन्तर्गत साधनवादी परंपरा के एक हिस्से के रूप में देखा गया है, जिसमें राज्य को शासक या प्रमुख वर्ग के साधन के रूप में देखा जाता हैं। यह परिप्रेक्ष्य मार्क्स और एंगेल्स की कम्युनिष्ट मैनिफेस्टो में व्यक्त की गई चिंता से निर्देशित है कि राज्य की कार्यकारी है ''लेकिन सम्पूर्ण पूंजीपति वर्ग के सामान्य मामलों के प्रबंधन के लिए एक समिति है''। हालांकि, डोमहॉफ के कामों को ध्यान से पढ़ने से पता चलता है कि वे साधनवादी दृष्टिकोण से सहमत नहीं और संयुक्त राज्य अमेरिका में राज्य को कारपोरेट वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करते हुए देखा जाता है, जबकि एक ही समय में व्यक्तिगत पूंजीवादियों या

व्यापारिक अभिजात वर्ग के एक हिस्से के हितों का विरोध किया जाता है। एक दूसरी परंपरा जो राज्य के संरचनात्मक दृष्टिकोण के रूप में वर्णित की गई है, के चारों ओर घूमती है और फ्रांसीसी मार्क्सवादियों के लेखन में पाई जाती है, विशेष रूप से निकोस पॉलंट्ज़स के लेखन में। पॉलंट्जस ने अपने प्रारंभिक कार्य ('पॉलिटिकल पावर एंड सोशल क्लासेस') में तर्क दिया कि पूंजीवाद में राज्य के कार्य मोटे तौर पर समाज की संरचनाओं द्वारा निर्धारित किए जाते हैं, न कि राज्य के पदों पर काबिज लोगों के द्वारा। विभाजित पूँजीपतियों द्वारा सदैव पूँजीवादी संरचना बनाये रखने तथा श्रामिक वर्ग की एकता के संयुक्त खतरे का मुकाबला करने के लिए राज्य अवेक्षाकृत स्वायत तरीके से कार्य करता है। पॉलंट्ज़स ने अपने बाद के काम (स्टेट, पावर एंड शोसलिज़म, 1980) में तर्क दिया कि पूंजीवादी राज्य स्वयं वर्ग संघर्ष का एक क्षेत्र है और जबकि यह राज्य सामाजिक–वर्ग संबंधों से मूर्त रूप लेता है, यह विवादास्पद भी है तथा इसलिए यह राज्य अंतर्गत वर्ग संघर्ष का उत्पाद है। राजनीति केवल राज्य के माध्यम से प्रभावशाली पूंजीपति वर्ग द्वारा वर्ग शक्ति का संगठन नहीं है और जो अधीनस्थ समूहों को संचालित करने और दबाने के लिए शक्ति का उपयोग करता है, यह राज्य की नीतियों को प्रभावित करने और राज्य के उपकरणों पर नियंत्रण के लिए बड़े सामाजिक आंदोलनों द्वारा संगठित संघर्ष का स्थल भी है।

पश्चिमी वैचारिक धरातल में राज्य सिद्धांत पर एक दिलचस्प बहस 1969–70 में न्यू लेफ्ट रिव्यू के पन्नों में हुई, जो राल्फ मिलिबैंड और पॉलंट्ज़स के बीच विचारों के आदान–प्रदान के रूप में हुई। जैसा कि पॉलंट्ज़स के दृष्टिकोण पर पहले ही ऊपर चर्चा की जा चुकी है, अब हम राल्फ मिलिबैंड के योगदान की संक्षिप्त परीक्षण करेगें। न्यू लेफ्ट रिव्यू में बहस मिलिबैंड की पुस्तक ''द स्टेट इन कैपिलिस्ट सोसाइटी : एन एनालिसिस ऑफ द वेस्टर्न सिस्टम ऑफ पॉवर (1969)'' के इर्द–गिर्द केंद्रित रही, जिसमें उन्होंने तर्क दिया कि शासक वर्ग की ओर से राज्य मार्क्सवादी तरीकों से कार्य कर सकता है, परन्तु वह स्वतः से कार्य नहीं करता है। राज्य एक वर्ग राज्य है, लेकिन इसके पास एक उच्च श्रेणी की स्वायत्तता और स्वतंत्रता होनी चाहिए यदि यह एक वर्ग राज्य के रूप में कार्य करता है। मिलिबैंड के काम में मुख्य तर्क यह है कि राज्य पूंजीवादी के हितों में कार्य कर सकता है, लेकिन हमेशा उनकी आज्ञा का पालन करें ये जरूरी नहीं। जबकि उपर्युक्त बहस मुख्य रूप से राज्य के पूंजीवादी समाजों की प्रकृति पर केंद्रित थी, जिसने कालांतर में विकासशील देशों में राज्य की प्रकृति पर बहस में जीवंत योगदान दिया। हमजा अलवी (द स्टेट इन पोस्ट कोलोनियल सोसाइटी : पाकिस्तान और बांग्लादेश, 1972) ने पाकिस्तान और बांग्लादेश में उपनिवेशवाद की बाद की स्थिति को 'अतिविकसित' के रूप में बताया (क्योंकि इसमे महानगरीय शक्तियों के निर्माण में स्वदेशी समर्थन की कमी थी) जो प्रभावी वर्गो से अपेक्षाकृत स्वायत्त बनी रही। 'नौकरशाही–सैन्य कुलीनतंत्र' द्वारा नियंत्रित राज्य, तीन उचित वर्गो के प्रतिस्पर्धी हितों के बीच मध्यस्थता करता है, अर्थात महानगरीय पूंजीपति, स्वदेशी पूंजीपति और भूमि वर्ग, जबकि एक ही समय में उन सभी की ओर सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए कार्य करते है। जिसमें उनके हित अंतर्निहित है, अर्थात निजी संपत्ति की संस्था और उत्पादन के प्रभावी तरीके के रूप में पूंजीवादी प्रणाली। सापेक्ष स्वायत्तता का यह विषय बाद में प्रणव बर्धन (द पोलिटकल इकोनॉमी ऑफ डेवल्पमेंट, 1986) ने भारतीय राज्य के अपने विश्लेषण में लिया था, जहां राज्य

पूंजीवादी, जमीदारों और पेशेवरों द्वारा गठित प्रभावी गठबंधन से अपेक्षाकृत स्वायत्त है। हांलाकि, बर्धन के विचार में राज्य एक प्रमुख कर्त्ता है, जो 'विकल्पशील लक्ष्य निर्माण, एजेंडा निश्चित करने और नीति निष्पादन मे' मुख्य भूमिका का निर्वहन करता है। औपनिवेशिक काल के पश्चात् राज्य के विकास के विचार और अफ्रीकी समाजों के संदर्भ में राज्य एवं वर्ग के बीच संबंध के संदर्भ में सापेक्ष स्वायत्तता की अवधारणा को जॉन साऊन के काम मे ले जाया गया था, (द स्टेट इन पोस्ट–कोलिनियल सोसाइटीज़सः तंजानिया, 1974)।

इस्सा जी शिवजी ('क्लास स्ट्रगल इन तंजानिया', 1976) के काम में एक अन्य परिप्रेक्ष्य सामने आया, जिन्होंनं तर्क दिया कि राज्य तंत्र के कार्मिक स्वयं प्रमुख वर्ग के रूप में उभरते है क्योंकि वे अपने स्वयं के विशिष्ट वर्ग के हित को विकसित करते है और खुद को 'नौकरशाही पूंजीपति वर्ग' में परिवर्तित करते है। राज्य की प्रकृति और भूमिका पर बहस इन पत्रिकाओं (जनरलस्) में जारी रही– रिव्यू ऑफ अफ्रीकन पोलिटकल इकोनॉमी, जनरल ऑफ कंटेम्पोरी एशिया, लैटिन अमेरिकन प्रस्पेक्टिव एंड द एनुअल वालूम ऑफ शोसलिस्ट में जारी रही, जो अर्थव्यवस्था, सामाजिक वर्गो और राजनीतिक ताकतों के रूप में हो रहे परिवर्तनों के प्रकाश में है।

5.8 वैश्वीकरण और नव-उदारवादी दृष्टिकोण

वैश्वीकरण के संदर्भ में, 'नव–उदारवादी' आधुनिकीकरण का दृष्टिकोण एक प्रभावी प्रतिमान के रूप में उभरा, जिसने परिधीय राज्यों में अल्पविकास का विश्लेषण और इससे निजात के उपायों की व्याख्या की। नव–उदारवादी प्रतिमान का प्रस्ताव है कि तीसरी दुनिया के परिधीय राज्यों का अल्पविकास मुख्यतः राज्य के नेतृत्व वाली विकास रणनीतियों की विफलता के कारण है, विशेष रूप से आयात–प्रतिस्थापन औद्योगीकरण। यह दृष्टिकोण मानता है कि ये देश राज्य नियंत्रण से मुक्त होकर खुली दुनिया की अर्थव्यवस्था में प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त कर सकते है। नव–उदारवादी दृष्टिकोण के केंद्र में राज्य और बाजार के बीच अलगाव या द्वंदवादद की धारणा निहित हैं। प्रतिमान राज्य की भूमिका को सीमित करता है जो सुशासन करने की परिस्थितियां 'प्रदान' करता है, जिसमें बाजार की ताकतें बिना किसी अवरोध के पनप सकती है। राज्य की इस समर्थकारी भूमिका में कानून और व्यवस्था का संरक्षण, निजी संपत्ति एवं अनुबंध की गारंटी और 'सार्वजनिक वस्तुओं का प्रावधान सन्निहित है। राज्य और बाजार के बीच एक प्राकृतिक द्वंदवाद की इस धारणा की आलोचना करते हुए, रे किले (शोयलोजी एंड डेवलप्मेंट : इम्पासेस एंड बियॉन्ड, 1995) बताते है कि दोनों के बीच अलगाव को प्राकृतिक रूप से नही लिया जा सकता है लेकिन यह ऐतिहासिक एवं सामाजिक रूप से निर्मित हुआ है। अलग–अलग राजनीतिक और आर्थिक रिक्त स्थान की उपस्थिति के बारे में बताते हुए वे कहते है कि पूंजीवादी सामाजिक संबंध अद्वितीय है, जो इंग्लैंड में उभरे और इसलिए इसे शेष 'उन्नत' पूंजीवादी दुनिया या विकासशील दुनिया के लिए सामान्यकृत नहीं किया जा सकता है। हांलाकि, विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) जैसी संस्थाओं ने अपनी संरचनात्मक और सुशासन की नीतियों के साथ समायोजित करने हेतु विकासशील दुनिया पर इस एक ऐतिहासिक नव–उदारवादी मॉडल को लागू करने के लिए आगे बढ़े। उदाहरणार्थ, विश्व

बैंक, यह दावा करता है कि विकासशील दुनिया की आर्थिक समस्याओं के लिए 'बहुत अधिक सरकार'(सरकार की आर्थिक नीतियों में अधिक दखलंदाजी) और बाजार की ताकतों की स्वतंत्र रूप से संचालन में विफलता को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। अतः, प्रस्तावित उपाय निजी क्षेत्र का प्रोत्साहन करना और 'राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं' का उदारीकरण करना है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, तीन प्रमुख नीति प्रस्तावों की सिफारिश की जाती हैः–(1) मुद्रा का अवमूल्यन (2) सीमित सरकार और निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन एवं (3) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार का उदारीकरण। हांलाकि ये संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम, विशिष्ट देशों की सामाजिक–आर्थिक वास्तविकताओं और सामाजिक न्याय प्रदान करने में राज्य द्वारा निभाई जा रही भूमिका की अनदेखी करते है। इस भूमिका से राज्य की वापसी का तात्पर्य है कि बाजार की ताकतों को पूर्ण स्वतंत्रता, यानि की इस स्थिति में अब राज्य से संसाधनों के असमान वितरण को संतुलित करने की भूमिका निभाने की उम्मीद नहीं रह जाती है। इसके पश्चात् देशों के अन्तर्गत मौजूद पदानुक्रमों और गहरे हो जाते है एवं कमजोर वर्गो, विशेषकर महिलाओं और/या कामगार वर्ग के शोषण में वृद्धि हो जाती है। इसी प्रकार, अतंराष्ट्रीय सहायता देने वाली संस्थाएं 'सुशासन' की धारणा के तहत एवं नवउदारवादी एजेंडे के अन्तर्गत ऐसी शर्ते लगाती है जिसमें बाजार की शक्तियां फले–फूले, जिसको संदेहास्पद रूप से देखा जाता हैं। उदाहरणार्थ, किले बताते है कि उप–सहारन अफ्रीका में संरचनात्मक समायोजन की विफलता को विश्व बैंक ने वहां सुशासन की कमी के रूप में, 'सार्वजनिक जवाबदेही', 'बहुलवाद' और 'कानून के शासन' को निर्दिष्ट करने में विफल रहने को बताया। ये सभी वजहों को विश्व बैंक (गवर्नेंसं एंड डेवलप्मेंट, वर्ल्ड डेवलप्मेंट, 1992) द्वारा उद्धृत किया गया है, विश्व बैंक का मानना है कि 'सुशासन' के महत्वपूर्ण घटक को समाज के निचले वर्गो की भागीदारी के बिना प्राप्त किया जा सकता है। नवउदारवादी एजेंडे के अन्तर्गत सुशासन की अवधारणा एक ऐसी स्थिति की परिकल्पना करती है जहां लोकतंत्र और स्वतंत्रता को एक दूसरे के विरोधी के रूप में देखा जाता है। स्वतंत्रता के तहत निजी संपत्ति का संरक्षण, मुक्त बाजार और नकारात्मक स्वतंत्रता के प्रावधान जैसे बोलने, संघ बनाने और स्वतंत्र रूप से विचरण करने के अधिकार शामिल होने चाहिए, जो दूसरे शब्दों में, बाजार अर्थव्यवस्था को संरक्षित करते हैं। दूसरी ओर, लोकंत्र को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है, क्योंकि ये राजनीतिक क्षेत्र से संबंधित हैं जहां भागीदारी और संसाधनों के वितरण की मांग की जाती है। बाद में, यह आशंका व्यक्त की गई कि आर्थिक क्षेत्र को ताकत देने हेतु आवश्यक स्वतंत्रता को खतरे में डाला जा सकता है। लोकतंत्र पर स्वतंत्रता को प्राथमिकता देना, जैसा कि नव–उदारवादी प्रतिमान द्वारा निर्धारित किया गया है, इस प्रकार यह लोगों की विकास संबंधी जरूरतों को पूरा करने में विफल हो जाता हैं।

बोध प्रश्न 2

नोटः क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का उपयोग करें।

ख) इकाई के अंत में दिए गए मॉडल उत्तर के साथ अपने उत्तर की जांच करें।

1) उत्पादन की विधि से क्या अभिप्राय है? उत्पादन सिद्धांत की विधा की अभिव्यक्ति के अनुसार तीसरी दुनिया में सामाजिक–आर्थिक प्रकृति की वास्तविकता क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) नव–उदारवादी दृष्टिकोण के प्रमुख तत्व क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5.9 सारांश

राजनीतिक अर्थव्यवस्था का दृष्टिकोण राष्ट्रों और सामाजिक–राजनीतिक घटनाओं के बीच के संबंधों को समझने और समझाने के लिए एक विघटन के रूप में उभरकर आया। इस दृष्टिकोण का आधार राजनीति और अर्थशास्त्र के कार्यक्षेत्र के बीच के संबंध की धारणा थी। पिछले कुछ दशकों में उभरने वाले विभिन्न व्याख्यात्मक ढ़ांचों में प्रमुख हैं, आधुनिकीकरण, अल्पविकास और निर्भरता, वैश्विक प्रणालियाँ, उत्पादन के तौर–तरीकों का निरूपण, वर्ग विश्लेषण, राज्य केन्द्रित विश्लेषण और नवउदारवादी विश्लेषण। हालांकि, इन सभी रूपरेखाओं के विश्लेषणात्मक उपकरणों में विविधता है, लगभग सभी के पास 'विकास' उनकी महत्वपूर्ण समस्या है। तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में इस समस्या के बारे अधिक जानकारी प्राप्त करने की प्रक्रिया में, उन्होंने अनिवार्य रूप से विश्व को एक पदानुक्रमित समभाग के रूप में देखा है। वे, हालांकि, आर्थिक शक्तियों और अर्थव्यवस्था तथा राजनीति के सहजीवन में जिस प्रकार से बाहरी ताकतों के संबंध में काम करते हैं, वे जटिलताओं में महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं।

5.10 प्रमुख शब्द

वर्ग राज्य (क्लास स्टेट): – एक राज्य जो एक विशेष वर्ग के हितों की रक्षा के लिए कार्य करता है। मार्क्सवादी शब्दावली में, इसका उपयोग वर्तमान उदारवादी राज्यों की व्याख्या करने के लिए किया जाता है, जोकि पूंजीवादी वर्ग केहितों की रक्षा करते हैं।

संरचनात्मक समायोजन :– अर्थशास्त्र में सुधार जैसे मुद्रा अवमूल्यन, निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन, अतर्राष्ट्रीय व्यापार का उदारीकरण आदि।

उत्पादन का तरीकाः– यह उस तरीके को संदर्भित करता है जिस तरीके से एक समाज में सामान का उत्पादन और वितरण किया जाता है। इसमें मुख्यतः दो पहलू शामिल हैं : उत्पादन की शक्तियाँ और उत्पादन के संबंध। उत्पादन की शक्तियों में वे सभी तत्व शामिल होते हैं जो उत्पादन में एक साथ लाए जाते हैं – भूमि या स्थान, कच्चा माल, और ईंधन से लेकर मानव कौशल और श्रम से लेकर मशीन, औजार और कारखाने तक। उत्पादन के संबंध में, लोगों और लोगों के बीच के रिश्तों और उत्पादन की शक्तियों से लोगों के रिश्ते शामिल होते हैं, जिसके माध्यम से यह निर्णय किया जाता है कि उत्पादों का क्या करना है।

5.11 संदर्भ

चट्टोपाध्याय, परेश. (1974). 'पॉलिटिकल इकोनॉमी : वहॉट इज़ इन नेम?', मंथली रिव्यू, अप्रैल।

चिलकोते, एच रोनाल्ड़. (1994). थ्योरीज़ ऑफ कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स, वेस्टव्यू प्रेस, 1994।

चिलकोते, एच रोनाल्ड़.(1989). 'ऑल्टरनेटिव अप्रोचिज़ टू कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स' इन हॉवर्ड जे. विर्दा(एड), न्यू डायरेक्शनस् इन कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स, वेस्टव्यू प्रेस, बोल्डर एंड लंडन।

केली, रे. (1995). साशिओलोजी एंड डेवलप्मेंट, यूसीएल प्रेस, लंडन।

लिमक्यूको, पीटर एंड ब्रूस मैक्फारलेन. (1983). नीओ–मार्कस्सिट थ्योरीज़ ऑफ डेवलप्मेंट. क्रूम हेल्म एंड सेंट मार्टिन प्रेस, लंड़न।

5.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) यह संवर्धन के एक विकासपरक मॉडल पर आधारित है; जहाँ पारंपरिक संमाज विकास के विभिन्न चरणों से गुज़रता है। विकास के ये चरण मोटे तौर पर सभी राष्ट्रों–राज्यों के समान है। युद्ध के बाद के विश्वके संदर्भ में, यह अनिवार्य माना जाता था कि आधुनिक पश्चिम को पारंपरिक तीसरी दुनिया में आधुनिकता के अवस्थांतरण को बढ़ावा देने में मदद करनी चाहिए।

2) चूंकि वालरस्टीन ने विश्व व्यवस्था पर ध्यान केंद्रित किया, वह विश्लेषण के एकमात्र इकाई के रूप में राष्ट्र–राज्य पर ध्यान कंद्रित करने के लिए आधुनिकीकरण सिद्धांत की आलोचना करता है क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय संरचनाओं की भूमिका, जो स्थानीय और राष्ट्रीय विकास को बाधित करती है, उनकी अवहेलना कर रहे हैं। वह आधुनिकीकरण सिद्धांत की मूल धारणा को भी खारिज करता है जोकि सभी देशों केलिए विकासपरक विकास का एकमात्र रास्ता है।

बोध प्रश्न 2

1) उत्पादन की विधि का अर्थ है कि कैसे एक समाज में माल का उत्पादन और वितरणकिया जाता है। यह उस आर्थिक स्तर को भी संदर्भित करता है जो यह निर्धारित करता हैं कि सामाजिक गठन करने वाले विभिन्न संरचित संपूर्णता में से कौन सा स्तर प्रमुख है। विकासशील देशों में आम तौर पर उत्पादन की पूंजीवादी विधि के साथ पूर्व–पूंजीवादी विधि समकालीन होती है।

2) नव–उदारवादी दृष्टिकोण अवधारणाओं के अध्ययन और मूल्यांकन पर आधारित है जैसे सुशासन, संरचनात्मक समायोजन, राज्य की वापसी, वैश्वीकरण इत्यादी।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY